जिहाद क्या है ?

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान

जिहाद क्या है?

लेखक
मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान

अनुवादक
तनवीर अहमद

संपादक
मोहम्मद आरिफ़

(Hindi Translation of Urdu Booklet - ***Islami Jihad***)
English version : What is Jihad

First published in 2018
This book is copyright free

अधिक जानकारी के लिए :-
Centre for Peace and Spirituality International
1, Nizamuddin West Market,
New Delhi-110013, India.
info@cpsglobal.org
www.cpsglobal.org

Goodword Books
1, Nizamuddin West Market
New Delhi-110013
Tel. +9111-41827083
Mob. +91-8588822672
email: info@goodwordbooks.com
www.goodwordbooks.com

Printed in India

विषय-सूची

भूमिका

जिहाद की परिभाषा 05

जिहाद शब्दकोष में 06

क़ुरआन में जिहाद की चर्चा 07

जिहाद क्या है? 10

इस्लाम में जिहाद की अवधारणा और विचार 11

वर्तमान समय के जेहादी आंदोलन 23

जिहाद की तीन क़िस्में 26

शांति की महत्ता 27

हिंसात्मक कार्रवाई का सौंदर्यीकरण 29

प्रतिक्रिया का इस्लाम में कोई स्थान नहीं 31

छोटा जिहाद और बड़ा जिहाद 32

सारांश 36

पारिभाषिक शब्दावली 38

भूमिका

ईश्वर-प्राप्ति का साधन ही जिहाद है, न कि युद्ध या हिंसा, जिहाद क्या है, इसे समझने के लिए सबसे पहले यह जानना चाहिए कि वर्तमान समय में मुसलमान जिहाद के नाम पर जो कुछ कर रहे हैं, वह जिहाद नहीं है। ये सभी जातीय भावनाओं के तहत छेड़ी हुई लड़ाइयाँ हैं, जिसे ग़लत तौर पर जिहाद का नाम दे दिया गया है। अरबी भाषा में जिहाद का मूल शब्द 'जुहुद' है अर्थात भरपूर प्रयास करना। जिहाद असल में शांतिपूर्ण प्रयास का नाम है, यह किसी प्रकार के लड़ाई-झगड़े या जंग का समानार्थक नहीं।

जिहाद एक लगातार जारी रहने वाली प्रक्रिया है, जो ईश्वरभक्त के जीवन में दिन-रात जारी रहती है और वह कभी समाप्त नहीं होती। निरंतर जिहाद यह है कि मनुष्य अपने जीवन के हर मामले में लगातार ईश्वर की इच्छा का पालन करता रहे और इस जिहाद में जो भी चीज़ रुकावट बने, उसे अपने जीवन पर हावी न होने दे, जैसे— मन की इच्छाएँ, स्वार्थ और अपने लाभ की इच्छा, रस्मो-रिवाज का ज़ोर और उसका दबाव, साख, प्रतिष्ठा, पहचान और प्रसिद्धि की आवश्यकता, अपनी महानता और श्रेष्ठता की बात, धन-दौलत की इच्छा आदि। ये सभी चीज़ें ईश्वर-उन्मुख जीवन (God-oriented life) और नेक कामों के लिए रुकावट पैदा करती हैं। इस तरह की सभी रुकावटों पर नियंत्रण पाते हुए ईश्वर के आदेश का पालन करना ही वास्तविक जिहाद है और यही जिहाद का मूल अर्थ भी है।

जिहाद की परिभाषा

जिहाद ज़िंदगी की एक सच्चाई है। जिस चीज़ को हम प्रयास या संघर्ष (Struggle) कहते हैं, उसी को अरबी भाषा में जिहाद कहा जाता। जिहाद न कोई रहस्यमय चीज़ है और न ही यह हिंसा के समानार्थी है। यह सामान्य तौर पर भरपूर प्रयास के लिए बोला जाने वाला शब्द है।

हिंदी में हम कहते हैं कि जब मैं बड़ा हुआ और जीवन के संघर्ष के दौर में दाख़िल हुआ। इसी तरह अरबी में कहा जाता है— 'बज़ल जुहदहु' यानी उसने अपनी पूरी ताक़त लगा दी। इसी तरह अंग्रेज़ी में कहते हैं—

We must struggle against this prejudice.

किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए 'प्रयास' करना एक आम मानवीय विशेषता है। इसके लिए जिस प्रकार हर भाषा में शब्द हैं, उसी प्रकार अरबी भाषा में भी शब्द हैं और यही 'जिहाद' का मूल अर्थ है। प्रयास के लिए अरबी भाषा में सअी एक आम शब्द है, लेकिन जिहाद के शब्द में अधिकतम या भरपूर का अंश शामिल है यानी बहुत ज़्यादा या अधिकतम प्रयास करना, फिर भी यहाँ एक अंतर पाया जाता है जिस पर इस संबंध में ध्यान देना आवश्यक है।

जब हम कोशिश या प्रयास का शब्द बोलें तो इसमें पुण्य, *इबादत* या धार्मिक कार्य की भावना का अर्थ शामिल नहीं रहता, लेकिन जिहाद शब्द जब इस्लामी निर्देश बना तो इसमें यह अर्थ और

उद्देश्य भी सम्मिलित हो गया कि प्रयास का अर्थ अगर केवल प्रयास है तो जिहाद का अर्थ एक ऐसा प्रयास करना है, जो इबादत हो और जिसमें लीन होने पर मनुष्य को पुण्य प्राप्त होता हो, जैसा कि क़ुरआन में आया है— "व जाहिदु फ़िल्लाहि हक़ जिहादिही यानी ईश्वर के रास्ते में पूरा प्रयास करो, जैसा कि प्रयास करने का हक़ है।"

(क़ुरआन, सूरह अल-हज, 22:78)

जिहाद शब्दकोश में

जिहाद का वास्तविक अर्थ जुहद है। इसका अर्थ है 'भरपूर प्रयास', लेकिन जुहद शब्द में 'अधिकतम' या 'भरपूर' की भावना का अर्थ भी शामिल है, जैसे— जहद अल-लब्न, जिसका मतलब है प्रयास करके सारा मक्खन निकाल लेना। इसी तरह अरबी में कहा जाता है कि 'बज़ल जुहदहु' यानी उसने अपनी पूरी ताक़त लगा दी। इसी तरह कहा जाता है— जहदा अर-रजुलू फ़ी कज़ा अय जद्दा फ़ीही व बालग़ा, जिसका मतलब है आदमी ने मामले में कोशिश की और अपनी पूरी कोशिश कर डाली। विशेष रूप में शब्द जिहाद या *मुजाहिद* का अर्थ भी यही है। जैसा कि क़ुरआन में आया है— "व जाहिदु फ़िल्लाहि हक़ जिहादिही।" इसका अर्थ है— "और ईश्वर के रास्ते में पूरी कोशिश करो, जैसा कि कोशिश करने का हक़ है।" (क़ुरआन, सूरह अल-हज, 22:78)

अरबी भाषा में 'जिहाद' मूल रूप से केवल प्रयास या भरपूर प्रयास के अर्थ में है। दुश्मन से लड़ाई भी चूँकि प्रयास का ही एक रूप है, इसलिए शाब्दिक अर्थ में नहीं, पर व्यावहारिक दृष्टि से दुश्मन के साथ लड़ाई को भी जिहाद कह दिया जाता है। अतः ग्यारहवीं

शताब्दी के इमाम अल-राग़िब अल-इसफ़हानी, जो अरबी भाषा और क़ुरआन की व्याख्या और उसकी तफ़्सीर के एक बहुत बड़े मुस्लिम विद्वान हुए हैं, उन्होंने जिहाद की तीन क़िस्मों की चर्चा की है—

(1) किसी इंसान की उसके बाहरी दुश्मनों से लड़ाई।

(2) किसी इंसान की शैतान से लड़ाई।

(3) किसी इंसान की अपने आपसे यानी अपने चित्त से लड़ाई।

क़ुरआन में जिहाद की चर्चा

क़ुरआन में भी जिहाद या इसके मूल धातु से उत्पन्न शब्द उसी अर्थ में आए हैं, जिस अर्थ में वह अरबी डिक्शनरी में इस्तेमाल होते हैं यानी किसी उद्देश्य के लिए भरपूर और अधिकतम प्रयास करना। 'जिहाद' शब्द का क़ुरआन में चार बार प्रयोग हुआ है और हर स्थान पर यह शब्द प्रयास और संघर्ष के अर्थ में है, न कि सीधे तौर पर लड़ाई और जंग के अर्थ में। इस संबंध में पहली क़ुरआनी आयत का हिंदी अनुवाद इस प्रकार है—

"कहो कि अगर तुम्हारे बाप और तुम्हारे लड़के, तुम्हारे भाई और तुम्हारी बीवियाँ, तुम्हारा ख़ानदान और वह माल, जो तुमने कमाया है और वह कारोबार, जिसके बंद होने से तुम डरते हो और वह घर, जिनको तुम पसंद करते हो, यह सब तुमको ईश्वर और उसके रसूल तथा उसकी राह में जिहाद करने से ज़्यादा प्रिय हैं तो इंतज़ार करो, यहाँ तक कि ईश्वर अपना आदेश भेज दे और ईश्वर आदेश न मानने वालों को रास्ता नहीं दिखाता।"

(क़ुरआन, सूरह अत-तौबा, 9:14)

इस आयत में इस्लाम के अनुयायियों को आदेश दिया गया है

कि वे बलिदान की हद तक जाकर इस्लाम के दावती मिशन यानी एक ईश्वर की ओर लोगों को बुलाने में *पैग़ंबर* का साथ दें। चाहे इस काम में उनके व्यक्तिगत हित और लाभ प्रभावित हों या माल और व्यापार-व्यवसाय का नुक़सान हो या शारीरिक कष्टों को सहन करना पड़े, हर स्थिति में वे इस दावती मिशन में पैग़ंबर के साथी बने रहें। इस आयत में जिहाद-फ़ी-सबीलिल्लाह (ईश्वर की राह में अधिकतम प्रयास करना) वास्तव में पैग़ंबर के दावती मिशन के लिए आया है, न कि जंग के लिए।

जिहाद शब्द क़ुरआन में दूसरी बार इस तरह आया है—

"तुम इनकार करने वालों की बात न मानो और उनके साथ क़ुरआन के माध्यम से बड़ा जिहाद करो।" (क़ुरआन, सूरह अल-फ़ुरक़ान, 25: 52)

इस आयत में स्पष्ट रूप में जिहाद का अर्थ ईश्वर की ओर बुलाने वाले जिहाद से है, क्योंकि क़ुरआन के माध्यम से जिहाद का कोई दूसरा अर्थ नहीं हो सकता।

जिहाद शब्द तीसरी जगह क़ुरआन में इस तरह आया है—

"अगर तुम मेरी राह में जिहाद और मेरी प्रसन्नता की खोज में निकलते हो।" (क़ुरआन, सूरह अल-मुम्तहिना, 60:1)

यह आयत मक्का-विजय से कुछ पहले उतरी।

630 ईस्वी में पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद का मदीना से मक्का का सफ़र जंग के लिए नहीं था। वह दरअसल एक शांतिपूर्ण अभियान था, जो *'हुदैबिया शांति-समझौता'* के रूप में निकलने वाले शांतिपूर्ण परिणामों को प्राप्त करने के लिए किया गया था। पैग़ंबर हज़रत

मुहम्मद अपने साथियों के साथ इस शांतिपूर्ण अभियान पर मदीना से मक्का की तरफ़ यात्रा कर रहे थे, तब इस मौक़े पर एक मुसलमान की ज़बान से ये शब्द निकले, "आज का दिन लड़ाई का दिन है।" यह सुनकर पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद ने कहा, "नहीं, आज का दिन रहमत और दया का दिन है।"

चौथी बार क़ुरआन में यह शब्द इस तरह आया है—

"ईश्वर की राह में जिहाद करो, जैसा कि जिहाद का हक़ है।"

(क़ुरआन, सूरह अल-हज, 22:78)

इस आयत में जिहाद का मतलब दावती जिहाद है। यह सच्चाई, इससे जुड़ी क़ुरआन की आयत से बिल्कुल स्पष्ट है। क़ुरआन में इसका ज़िक्र इस तरह आया है—

"ऐ ईमान लाने वालो ! झुको और सजदा करो और अपने रब की बंदगी करो और भलाई करो, ताकि तुम्हें सफलता प्राप्त हो और ईश्वर के मार्ग में परस्पर मिलकर जिहाद करो, जैसा कि जिहाद का हक़ है। उसने तुम्हें चुन लिया है और धर्म के मामले में तुम पर कोई तंगी और कठिनाई नहीं रखी। तुम्हारे बाप इब्राहीम के पंथ को तुम्हारे लिए पसंद किया। उसने इससे पहले तुम्हारा नाम मुस्लिम (आज्ञाकारी) रखा था और इस ध्येय से, ताकि *रसूल* तुम पर गवाह हो और तुम लोगों पर गवाह हो। अतः नमाज़ का आयोजन करो और ज़कात दो और ईश्वर को मज़बूती से पकड़े रहो। वही तुम्हारा संरक्षक है। तो क्या ही अच्छा संरक्षक है और क्या ही अच्छा सहायक।" (क़ुरआन, सूरह अल-हज, 22:77-78)

जिहाद क्या है?

जिहाद क्या है, इसे समझने के लिए सबसे पहले यह जानना चाहिए कि वर्तमान समय में मुसलमान जिहाद के नाम पर जो कुछ कर रहे हैं, वह जिहाद नहीं है। ये सभी जातीय भावनाओं के तहत छेड़ी हुई लड़ाइयाँ हैं, जिसे ग़लत तौर पर जिहाद का नाम दे दिया गया है।

जिहाद असल में शांतिपूर्ण प्रयास का नाम है, वह क़िताल या जंग का सामानार्थक नहीं। वैसे कभी-कभी विस्तृत अर्थों में प्रयोग के तौर पर जिहाद को *क़िताल* के अर्थ में बोला जाता है, लेकिन शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से जिहाद और क़िताल दोनों समान शब्द नहीं हैं। यहाँ इस संबंध में क़ुरआन और पैग़ंबरे-इस्लाम के कथन *'हदीस'* से जिहाद शब्द के कुछ अर्थ इस प्रकार हैं—

1. क़ुरआन में आया है— "जिन लोगों ने हमारे लिए जिहाद किया तो हम उनको अपनी राहें दिखाएँगे।" (सूरह अल-अनकबूत, 29:69)

इस आयत में सत्य की खोज को जिहाद कहा गया है यानी ईश्वर को पाने के लिए प्रयास करना, ईश्वर की अनुभूति प्राप्त करने के लिए प्रयास करना, ईश्वर की नज़दीकी ढूँढ़ने के लिए प्रयास करना। स्पष्ट है कि इस जिहाद का जंग या टकराव से कोई संबंध नहीं।

2. इसी तरह क़ुरआन में कहा गया है— "मोमिन तो बस वे हैं, जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाएँ। फिर उन्होंने शक नहीं किया और अपने माल व अपनी जान से अल्लाह के रास्ते में जिहाद किया, यही सच्चे लोग हैं।" (सूरह अल-हुजुरात, 49:15)

इस आयत के अनुसार, अपने माल को ईश्वर के रास्ते में ख़र्च करना एक जिहादी अमल है।

3. इसी तरह क़ुरआन में आया है कि इनकार करने वालों के साथ क़ुरआन की सहायता से जिहाद करो। (सूरह अल-फ़ुरक़ान, 25:52)

दूसरे शब्दों में कहा जाए तो यह कि क़ुरआन की शिक्षाओं को फैलाने के लिए शांतिपूर्ण तरीक़े से अधिकतम प्रयास करो।

4. इसी तरह पैग़ंबरे-इस्लाम हज़रत मुहम्मद ने बताया कि मुजाहिद वह है, जो ईश्वर के आज्ञापालन में अपने चित्त से यानी स्वयं से जिहाद करे। (तिरमिज़ी, फ़ज़ाइल-ए-जिहाद)

इससे पता चलता है कि *नफ़्स* के उकसावे से लड़कर अपने आपको सच्चाई के रास्ते पर क़ायम रखना ही जिहाद है। ज़ाहिर है कि यह लड़ाई अंदरूनी तौर पर अपने मन के मैदान में होती है, न कि बाहरी दुनिया के किसी जंग के मैदान में।

5. एक रिवायत के अनुसार, हज़रत मुहम्मद ने कहा कि हज जिहाद है। (इब्न माजा, किताब अल-मनासिक)

इससे पता चलता है कि हज अदा करने का अमल जिहाद का एक काम है। हज को उसके उद्देश्य और चाहे गए अंदाज़ में अंजाम देने के लिए आदमी को कड़ा संघर्ष करना पड़ता है।

इस्लाम में जिहाद की अवधारणा और विचार

जैसा कि पहले बताया गया है 'जिहाद' का मूल शब्द 'जुहद' है। जुहद का अर्थ है प्रयास करना। इस शब्द में अधिकतम या बहुत का मतलब शामिल है। यह शब्द किसी काम में या किसी उद्देश्य के लिए, किसी का अपनी क्षमताओं की आख़िरी हद तक भरपूर प्रयास को

दर्शाता है। इस तरह क़ुरआन में आया है—

“व जाहिदु फ़िल्लाहि हक़्क़ जिहादिही”यानी ईश्वर की राह में भरपूर प्रयास करो, जैसा कि प्रयास करने का अधिकार है। (क़ुरआन, सूरह अल-हज, 22: 78)

अरबी भाषा में ‘जिहाद’ मूल रूप से केवल प्रयास या भरपूर प्रयास के अर्थ में है। दुश्मन से जंग भी चूँकि प्रयास का ही एक रूप है, इसलिए शाब्दिक अर्थ में नहीं, पर व्यवहारिक दृष्टि से शत्रु के साथ जंग को भी जिहाद कह दिया जाता है। फिर भी जंग या युद्ध के लिए अरबी में वास्तविक शब्द क़िताल है, न कि जिहाद।

दुश्मन के साथ जंग एक कभी-कभार होने वाली घटना है, जो कभी घटित होती है और कभी नहीं होती, लेकिन जिहाद एक लगातार जारी रहने वाली प्रक्रिया है, जो *मोमिन* की ज़िंदगी में हर दिन और हर रात जारी रहती है, वह कभी समाप्त नहीं होती। निरंतर जिहाद यह है कि मनुष्य अपने जीवन के हर मामले में लगातार ईश्वर की मर्ज़ी पर क़ायम रहे और इस जिहाद में जो भी चीज़ रुकावट हो, उसको अपने जीवन पर प्रभावी न होने दे, जैसे— नफ़्स या मन की इच्छाएँ, स्वार्थ और अपने लाभ की इच्छा, रस्मो-रिवाज का ज़ोर और उसका दबाव, साख, प्रतिष्ठा, पहचान और प्रसिद्धि की आवश्यकता, अपनी महानता और श्रेष्ठता की बात, माल व दौलत की इच्छा आदि। ये सभी चीज़ें ईश्वर रुखी ज़िंदगी (God-oriented life) और नेक कामों के लिए रुकावट की हैसियत रखती हैं। इस तरह की सभी रुकावटों पर नियंत्रण पाते हुए ईश्वर के आदेश पर क़ायम रहना, यही वास्तविक जिहाद है और यही जिहाद का मूल अर्थ है।

इस जिहाद के बारे में 'हदीस' की किताबों में बहुत-सी रिवायतें मौजूद हैं। उदाहरण के लिए, हदीस की किताब मुसनद अहमद के कुछ बयान यह हैं—

(1) **अल-मुजाहिद मन जाहदा नफ़्सुहू लिल्लाह** (6/20) : मुजाहिद वह है, जो अपने नफ़्स यानी अपने मन के ख़िलाफ़ संघर्ष करे।

(2) **अल-मुजाहिद मन जाहदा नफ़्सुहू फ़ी-सबीलिल्लाह** (6/22) : मुजाहिद वह है, जो अल्लाह की राह में भरपूर प्रयास करता है।

(3) **अल-मुजाहिद मन जाहदा नफ़्सुहू फ़ी-ताअतिल्लाह** (6/26) : मुजाहिद वह है, जो अल्लाह की मर्ज़ी पर चलने के लिए अपने नफ़्स के साथ संघर्ष करे।

वर्तमान दुनिया को इम्तिहान के लिए बनाया गया है। यहाँ का पूरा माहौल इस तरह बनाया गया है कि आदमी लगातार जाँच और आज़माइश के हालात से गुज़रता रहे। इन आज़माइशी मौक़ों पर आदमी को तरह-तरह की रुकावटों का सामना करना पड़ता है। उदहारण के तौर पर—

(1) एक सच्चाई उसके सामने आए, मगर उसे स्वीकार करने में अपना दर्जा नीचा होता हुआ दिखाई दे।

(2) किसी का माल एक आदमी के क़ब्ज़े में हो और उसे हक़दार की तरफ़ वापस करने में अपना नुक़सान दिखाई देता हो।

(3) साधारण जीवन व्यतीत करने में अपने अहं और अपनी इच्छाओं को दबाना पड़े।

(4) कभी अपने अंदर यह सोच उभरती है कि अपने क्रोध और प्रतिशोध की भावनाओं को सहन करना अपने आपको कम करने के सामान होगा।

(5) न्याय की बात बोलने में यह डर और आशंका हो कि लोगों के बीच उसकी लोकप्रियता ख़त्म हो जाएगी।

(6) स्वार्थी चरित्र के बजाय सदाचार और सैद्धांतिक जीवन को अपनाने में कुछ सुविधाओं से वंचित हो जाने का ख़तरा नज़र आता हो आदि।

इस तरह के विभिन्न अवसरों पर बार-बार आदमी को अपनी इच्छाओं को दबाना पड़ता है। अपने नफ़्स और अहं का बलिदान देना पड़ता है, यहाँ तक कि कई बार ऐसा अनुभव होता है कि उसे अपनी श्रेष्ठता और अहंकार का बलिदान करना पड़ेगा। इस तरह के सभी अवसरों पर हर रुकावट को पार करते हुए और हर नुक़सान को झेलते हुए सच्चाई पर अडिग रहना ही असली जिहाद है और यही जिहाद का बुनियादी अर्थ भी है। जो लोग इस जिहाद पर क़ायम रहें, वही आख़िरत में यानी मौत के बाद की ज़िंदगी में जन्नत के हक़दार होंगे।

जिहाद वास्तव में शांतिपूर्ण संघर्ष का काम है। इसी शांतिपूर्ण संघर्ष का एक रूप वह है, जिसे *दावत व तबलीग़* कहा जाता है यानी लोगों को ईश्वर की राह की ओर बुलाना। क़ुरआन में कहा गया है कि इनकार करने वालों की बात न मानना और इसके (क़ुरआन) द्वारा उनसे जिहाद करो, बड़ा जिहाद। (सूरह अल-फ़ुरक़ान, 25:52)

इसका अर्थ यह है कि अह्ले-बातिल यानी सच्चाई का इनकार करने वाले लोग जो बात उनसे मनवाना चाहते हैं, उसे हरगिज़ न

मानो, बल्कि क़ुरआन की शिक्षाओं का प्रचार करो और इस काम में असाधारण जोश और उत्साह के साथ अपना पूरा प्रयास करो। इस आयत में जिहाद का अर्थ कोई फ़ौजी कार्रवाई नहीं है, बल्कि इसका मतलब पूरी तरह से बौद्धिक और वैचारिक प्रक्रिया है। इस कार्य को दूसरे शब्दों में, असत्य का खंडन, सच्चाई की पहचान और उसका समर्थन करना कहा जा सकता है।

जिहाद का अर्थ क़िताल के अर्थ में भी अपने बुनियादी भावार्थ की दृष्टि से शांतिपूर्ण संघर्ष का ही दूसरा नाम है। दुश्मन की ओर से अगर युद्ध-संबंधी फ़ौजी चुनौती दी जाए, तब भी सबसे पहले सारा प्रयास इस बात का किया जाएगा कि इसका उत्तर शांतिपूर्ण तरीक़े से दिया जाए। शांति के उपायों का त्याग केवल उस समय किया जाएगा, जब इसे प्रयोग करना संभव ही न हो और जबकि दूसरों के द्वारा शुरू की गई जंग के जवाब में जंग ही एकमात्र संभव विकल्प बचा रह गया हो। वास्तविक बात यह है कि इस हालत में यह एकमात्र संभव विकल्प युद्ध सिर्फ़ एक स्थापित सरकार के लिए उचित है, आम जनता के लिए जंगी कार्रवाई करना इस्लाम में सिरे से जायज़ नहीं।

इस मामले में पैग़ंबरे-इस्लाम हज़रत मुहम्मद की पत्नी हज़रत आयशा का एक बयान हमारे लिए मार्गदर्शक उदाहरण की हैसियत रखता है। उन्होंने कहा, "हज़रत मुहम्मद को जब भी दो चीज़ों में से एक चीज़ का चुनाव करना होता तो आप हमेशा आसान को चुनते।" (सही अल-बुख़ारी, किताबुल-अदब)

हज़रत मुहम्मद की इस सुन्नत यानी उनके इस तरीक़े का संबंध ज़िंदगी के सिर्फ़ आम मामलों से न था, बल्कि युद्ध जैसे संगीन मामले

से भी था, जो एक प्रकार से कठिन चुनाव की हैसियत रखता है। आपके जीवन-चरित्र का अध्ययन बताता है कि आपने कभी अपनी ओर से जंग की पहल नहीं की और जब आपके विरोधियों की ओर से आपको जंग में उलझाने का प्रायस किया गया तो आपने हमेशा इससे बचने का कोई उपाय अपनाकर जंग को टालने का प्रयास किया। आप केवल उस समय जंग में शामिल हुए, जबकि दूसरा कोई रास्ता बिल्कुल शेष ही न रहा था।

हज़रत मुहम्मद की *सुन्नत* के अनुसार, इस्लाम में आक्रामक जंग नहीं है, इस्लाम में केवल प्रतिरक्षा या बचाव वाली जंग है और वह भी केवल उस समय, जबकि इससे बचना संभव ही न रहे। वास्तविकता यह है कि जीवन में हमेशा दो विकल्पों में से एक को चुनने की समस्या रहती है : एक शांतिपूर्ण संघर्ष और दूसरा हिंसापूर्ण संघर्ष।

हज़रत मुहम्मद के जीवन-चरित्र का अध्ययन बताता है कि आपने हमेशा और हर मामले में यही किया कि हिंसापूर्ण कार्यशैली को छोड़कर शांतिपूर्ण ढंग से काम के तरीक़े को अपनाया। आपका पूरा जीवन इसी नियम का एक सफल व्यावहारिक उदाहरण है। यहाँ इस प्रकार के कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं—

(1) पैग़ंबरी मिलने के बाद आपके सामने यह सवाल था कि आप ऊपर लिखे दोनों तरीक़ों में से किस तरीक़े को अपनाएँ— शांतिपूर्ण तरीक़ा या हिंसापूर्ण तरीक़ा। जैसा कि मालूम है, पैग़ंबर की हैसियत से आपका मिशन यह था कि *शिर्क* को ख़त्म करें और *तौहीद* यानी केवल एक ईश्वर के प्रति समर्पण की आस्था को स्थापित करें। मक्का में काबा को इसी तौहीद के केंद्र के तौर पर बनाया गया था, मगर आपकी

पैग़ंबरी के वक़्त काबा में 360 देव-प्रतिमाएँ रख दी गई थीं। ऐसी स्थिति में संभवतः यह होना चाहिए था कि क़ुरआन में सबसे पहले इस तरह की कोई आयत उतरती कि काबा को देव-प्रतिमाओं से पवित्र करो और उसे दुबारा एकेश्वरवाद का केंद्र बनाकर अपने मिशन को आगे बढ़ाओ, लेकिन इस तरीक़े से अपने काम की शुरुआत मक्का के *क़ुरैश* के साथ जंग करने के समान थी, जिनका नेतृत्व अरब में इसीलिए क़ायम था कि वे काबा के रखवाले बने हुए थे। इतिहास और घटनाएँ हमें बताती हैं कि इस स्तर पर हज़रत मुहम्मद ने काबा के व्यावहारिक शुद्धिकरण के मामले में पूरी तरह से परहेज़ किया और अपने आपको सिर्फ़ एकेश्वरवाद के वैचारिक आवाहन तक सीमित रखा। यह इस प्रकार हिंसात्मक कार्यशैली के मुक़ाबले में शांतिपूर्ण ढंग से काम के तरीक़े का पहला पैग़ंबराना उदाहरण था।

(2) हज़रत मुहम्मद इसी शांति के नियम पर अडिग रहते हुए 13 साल तक मक्का में अपना काम करते रहे, मगर इसके बावजूद क़ुरैश आपके दुश्मन बन गए। यहाँ तक कि उनके सरदारों ने आपस में सलाह करके यह तय किया कि सब मिलकर आपकी हत्या कर दें। इसलिए उन्होंने हाथों में तलवारें लेकर आपके घर को घेर लिया। ऐसा लगता था कि पैग़ंबर और उनके साथियों के लिए जंग की खुली चुनौती थी, लेकिन आपने ईश्वर के मार्गदर्शन के तहत यह फ़ैसला लिया कि जंगी मुक़ाबले से परहेज़ करें। इसलिए आप रात के सन्नाटे में मक्का से निकले और ख़ामोशी के साथ यात्रा करते हुए मदीना पहुँच गए। इस घटना को इस्लाम के इतिहास में *हिजरत* कहा जाता है। हिजरत स्पष्ट रूप से हिंसापूर्ण कार्यशैली के मुक़ाबले में शांतिपूर्ण

कार्यशैली को अपनाने का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है।

(3) ग़ज़वा-ए-हिजाब या ग़ज़वा-ए-ख़ंदक़ (ख़ंदक़ यानी खाई की लड़ाई) भी इसी तरह का एक उदाहरण है। इस मौक़े पर कई क़बीलों के लोग बहुत बड़ी संख्या में जमा होकर मदीने की ओर रवाना हुए। वे मदीने पर हमला करना चाहते थे। यह साफ़ तौर पर आपके विरोधियों की ओर से युद्ध की एक खुली चुनौती थी, लेकिन हज़रत मुहम्मद ने युद्ध से बचने के लिए यह तरीक़ा अपनाया कि रात-दिन की मेहनत से अपने और विरोधियों के बीच शहर के चारों ओर एक लंबी ख़ंदक़ खोद दी। उस समय के हालात में यह खाई मानो एक बाधक (Buffer) के रूप में हमलावरों के ख़िलाफ़ युद्ध को टालने या इससे बचने का एक तरीक़ा था। इसका परिणाम यह हुआ कि क़ुरैश की फ़ौज खाई के दूसरी तरफ़ कुछ दिनों तक ठहरी और उसके बाद वापस चली गई। उस समय के हालात में वह खाई बनाने का काम भी हिंसक विकल्प चुनने के ख़िलाफ़ शांति के विकल्प को चुनने का एक उदाहरण है।

(4) इसी तरह 'हुदैबिया शांति-समझौता' भी पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद की एक सुन्नत की हैसियत रखता है। हुदैबिया में यह स्थिति थी कि पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद अपने साथियों के साथ मक्का में दाख़िल होकर *उमरह* करना चाहते थे। तब मक्का के सरदारों ने हुदैबिया में आपको रोक दिया और कहा कि आप लोग मदीना वापस चले जाएँ, हम किसी भी क़ीमत पर आपको मक्का में दाख़िल होने नहीं देंगे। दूसरे शब्दों में कहें तो यह क़ुरैश की तरफ़ से आपके ख़िलाफ़ युद्ध करने की एक चुनौती थी। अगर आप अपने इरादे के मुताबिक़ उमरह करने के लिए मक्का की तरफ़ बढ़ते तो निश्चित था

कि क़ुरैश से जंगी टकराव पेश आता, मगर आपने हुदैबिया पर ही अपनी यात्रा समाप्त कर दी और क़ुरैश की एकतरफ़ा शर्तों पर शांति का समझौता करके मदीना वापस आ गए। यह भी साफ़ तौर पर हिंसापूर्ण कार्यशैली के मुक़ाबले में शांति के तरीक़े को अपनाने का एक और पैग़ंबराना उदाहरण है।

(5) मक्का-विजय की घटनाओं से भी आपकी यही सुन्नत साबित होती है। उस समय आपके पास बहुत ही बहादुर और विशेष रूप से समर्पित साथी दस हज़ार की संख्या में मौजूद थे। वे निश्चित रूप से क़ुरैश से कामयाब लड़ाई लड़ सकते थे, मगर पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद ने ताक़त के इस्तेमाल के बजाय ताक़त को दिखाने का तरीक़ा अपनाया। आपने ऐसा नहीं किया कि दस हज़ार की शक्तिशाली सेना लेकर आप इस ऐलान के साथ निकले कि मक्का के क़ुरैश से जंगी टकराव करके मक्का पर अधिकार करें। इसके बजाय आपने यह किया कि पूरी गोपनीयता के साथ यात्रा की तैयारी की और अपने साथियों के साथ सफ़र करते हुए बड़ी ख़ामोशी के साथ मक्का में प्रवेश कर गए। आपका यह प्रवेश इतना अचानक था कि क़ुरैश आपके ख़िलाफ़ कोई तैयारी न कर सके और मक्का किसी ख़ूनी टकराव और संघर्ष के बिना विजित हो गया। यह भी हिंसापूर्ण तरीक़ों के इस्तेमाल के मुक़ाबले में शांतिपूर्ण कार्यशैली को अपनाने का एक बढ़िया उदाहरण है।

इन उदाहरणों से साबित होता है कि न सिर्फ़ आम हालात में, बल्कि बहुत ही आपातकालीन और बेहद गंभीर हालात में भी पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद ने जंग के मुक़ाबले में शांति के सिद्धांत को अपनाया।

आपकी सभी सफलताएँ आपकी इस शांतिपूर्ण कार्यशैली का व्यावहारिक उदाहरण है।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, इस्लाम में शांति की हैसियत निरंतर रूप से पालन किए जाने वाले आदेश की है और जंग की हैसियत सिर्फ़ मजबूरी के तहत पालन किए जाने वाले आदेश की। इस सच्चाई को सामने रखें और फिर यह देखें कि वर्तमान समय में स्थिति क्या है। इस मामले में आप पाएँगे कि आधुनिक समय प्राचीन समय की दुनिया से पूरी तरह से अलग है। प्राचीन समय में हिंसक तरीक़ों का इस्तेमाल एक सामान्य बात थी, जबकि शांतिपूर्ण कार्यशैली को अपनाना एक बेहद मुश्किल काम था, लेकिन आज स्थिति पूरी तरह से बदल गई है।

वर्तमान समय में हिंसापूर्ण तरीक़ों का इस्तेमाल आख़िरी हद तक अमान्य, अस्वीकार्य और असहनीय बन चुका है। इसके मुक़ाबले में शांतिपूर्ण कार्यशैली को एकमात्र स्वीकार्य और पसंदीदा कार्यशैली की हैसियत हासिल हो गई है। इसके अलावा यह कि वर्तमान समय में शांतिपूर्ण तरीक़ों के इस्तेमाल को ऐसा बौद्धिक और व्यावहारिक समर्थन हासिल हो गया है, जिसने इसे अपने आपमें एक बेहद ताक़तवर और असरदार कार्यशैली की हैसियत दे दी है।

इन शांतिपूर्ण तरीक़ों के इस्तेमाल के समर्थन में बहुत-सी चीज़ें शामिल हैं। उदाहरण के तौर पर, अपनी राय और विचार व्यक्त करने की आज़ादी का हक़, संचार के आधुनिक साधनों का उपयोग करते हुए अपनी बात को ज़्यादा-से-ज़्यादा लोगों तक पहुँचाने की संभावनाएँ, मीडिया की ताक़त को अपने हक़ में इस्तेमाल करना

आदि। इन आधुनिक परिवर्तनों ने शांतिपूर्ण कार्यशैली को एक साथ और एक ही समय में बहुत अधिक लोकप्रिय कार्यशैली भी बना दिया है और इसी के साथ ज़्यादा प्रभावी भी।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद की सुन्नत यह है कि जब शांति का विकल्प व्यावहारिक रूप से मौजूद हो तो इस्लामी आंदोलन में सिर्फ़ इसी को इस्तेमाल किया जाएगा और हिंसात्मक संघर्ष को छोड़ दिया जाएगा। अब मौजूदा हालात यह हैं कि समय और ज़माने के बदलावों के नतीजे में शांतिपूर्ण कार्यशैली न सिर्फ़ बिना रुकावट के और आसानी से उपलब्ध है, बल्कि ऊपर वर्णित कई सहायक कारकों के आधार पर वह बहुत ज़्यादा कारगर और प्रभावी हैसियत हासिल कर चुकी है। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि वर्तमान समय में हिंसापूर्ण तरीक़ों का इस्तेमाल मुश्किल होने के साथ-साथ व्यावहारिक रूप में भी बिल्कुल अनुपयोगी है। इसके मुक़ाबले में शांतिपूर्ण तरीक़ों का इस्तेमाल आसान होने के साथ-साथ बहुत ज़्यादा कारगर, प्रभावी और लंबे समय तक क़ायम रहने वाला है।

अब शांतिपूर्ण तरीक़ों का इस्तेमाल दो संभव विकल्पों के बीच— शांतिपूर्ण और हिंसक विकल्प में से सिर्फ़ एक के चुनाव का सवाल नहीं रह गया है, बल्कि शांतिपूर्ण कार्यशैली ही एकमात्र इस्तेमाल करने योग्य और कारगर विकल्प बन गया है। ऐसी हालत में यह कहना बिल्कुल सही होगा कि अब हिंसापूर्ण तरीक़ों का इस्तेमाल व्यावहारिक रूप में एक बेकार, रद्द और त्यागा हुआ कार्यशैली का दर्जा प्राप्त कर चुका है, वही चीज़ जिसको शरीयत

यानी इस्लामी क़ानून की भाषा में *मंसूख़* कहा जाता है।

अब इस्लाम के अनुयायियों के लिए व्यावहारिक स्तर पर केवल एक ही कार्यशैली का चुनाव शेष रह गया है और वह है बिना किसी भी संदेह के शांतिपूर्ण तरीक़ों का इस्तेमाल, सिवाय इसके कि इस वक़्त जो हालात हैं, उनमें ऐसे बदलाव पैदा हो जाएँ, जो दुबारा आदेश को बदल दें।

यह सही है कि पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद के ज़माने में कुछ मौक़ों पर हिंसापूर्ण कार्यशैली को अपनाया गया, मगर उसकी हैसियत वक़्त और हालात के आधार पर एक ऐसे विकल्प की थी, जिसे अपनाने के लिए मजबूर किया गया था। अब जबकि समय और काल में परिवर्तन के परिणामस्वरूप यह मजबूरी नहीं रही तो हिंसापूर्ण कार्यशैली का चुनाव भी पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद की सुन्नत के अनुसार अनावश्यक कार्यशैली मान लिया जाए । अब नई परिस्थितियों में सिर्फ़ शांतिपूर्ण कार्यशैली का चुनाव किया जाएगा।

वर्तमान काल में इस मामले का एक शिक्षाप्रद उदाहरण हिंदुस्तानी लीडर महात्मा गाँधी (मृत्यु : 1948 ई०) के जीवन में देखने को मिलता है। समय और काल में इसी परिवर्तन के कारण महात्मा गाँधी के लिए यह संभव हुआ कि वे हिंदुस्तान में एक पूर्ण विकसित राजनीतिक लड़ाई लड़ सके और उसे कामयाबी की मंज़िल तक पहुँचाया। यह सब कुछ शुरू से आख़िर तक अहिंसा और शांतिपूर्ण कार्यशैली के नियम को अपनाने से ही पूरा हुआ।

मुस्लिम धर्मशास्त्र और विधिशास्त्र (फ़िक़्ह) का एक प्रसिद्ध सिद्धांत है कि स्थान और काल में परिवर्तन के अनुसार कुछ नियमों

को संशोधित किया जाना चाहिए या उसे कर सकते हैं।

मान्य और स्वीकार किए गए इस *फ़िक़्ही* सिद्धांत की माँग है कि जब समय और काल के हालात बदल चुके हों तो वर्तमान हालात के अनुसार *शरीयत* के आदेशों का पालन करने के लिए उसके इस्तेमाल का तरीक़ा तलाश किया जाए, ताकि धार्मिक आदेश को परिवर्तित समय से सुसंगत किया जा सके। फ़िक़्ह के इस सिद्धांत का संबंध जिस तरह दूसरे मामलों से है, उसी तरह इसका संबंध युद्ध के मामलों से भी है। इस सिद्धांत की यह माँग भी है कि हिंसा के तरीक़े को अब पूरी तरह से रद्द क़रार दिया जाए और सिर्फ़ शांतिपूर्ण तरीक़े को धर्मशास्त्र के अनुसार उचित कार्यशैली का दर्जा दिया जाए।

वर्तमान समय के जेहादी आंदोलन

वर्तमान समय में बहुत से देशों के मुसलमान इस्लामी जिहाद के नाम से सशस्त्र और हिंसक आंदोलन चला रहे हैं, मगर कोई आंदोलन सिर्फ़ इस वजह से जिहाद का आंदोलन नहीं हो सकता कि उस आंदोलन को चलाने वालों ने या उसके अग्रदूतों ने उसको जिहाद का नाम दे दिया हो। कोई कार्रवाई केवल उस समय इस्लामी जिहाद कहलाती है, जबकि वह इस्लाम की निश्चित की हुई शर्तों पर पूरा उतरे। जिहाद की शर्तों को पूरा किए बिना जो जिहाद किया जाए, वह व्यावहारिक रूप से और सही अर्थों में जिहाद नहीं होगा, बल्कि वह दंगा-फ़साद होगा। जो लोग इस काम में जुड़े हुए हों, वे अपने इस काम पर जिहाद का इनाम नहीं पाएँगे, बल्कि ईश्वर की तरफ़ से वे सिर्फ़ सज़ा के हक़दार होंगे।

जंग या युद्ध के अर्थ में जिहाद की शर्तें क्या-क्या हैं, इसे मैं

अपनी किताबों में काफ़ी विस्तार से लिख चुका हूँ। यहाँ सिर्फ़ एक बात को स्पष्ट करना ज़रूरी है और वह यह कि युद्ध के अर्थ में जिहाद की हैसियत नमाज़, रोज़ा जैसे निजी या व्यक्तिगत कर्म की नहीं है, बल्कि वह एक ऐसी कार्रवाई है जिसका संबंध पूरी तरह से राज्य और सरकार से है।

जंग के अर्थ में जिहाद की इस उसूली हैसियत को बहुत स्पष्ट रूप से क़ुरआन और हदीस में समझाया गया है। उदाहरण के तौर पर, क़ुरआन में आदेश दिया गया है कि दुश्मन की ओर से डर की स्थिति पैदा हो तो उसे लेकर स्वयं उसके ख़िलाफ़ कार्रवाई शुरू न करो, बल्कि उसे सरकार के अधिकारियों की तरफ़ लौटाओ, ताकि वे मामले की सही प्रकृति को समझें और उसके बारे में सही और आवश्यक क़दम उठाएँ (क़ुरआन, सूरह अन-निसा, 4:83)। क़ुरआन की यह आयत बताती है कि दुश्मन की तरफ़ से डर (जंग की हालत में) का माहौल बनाये पर जनता के लिए अपने आप क़दम उठाना या पहल करना सही नहीं है। वे सिर्फ़ यह कर सकते हैं कि मामले को सरकार के हवाले कर दें और सरकार की तरफ़ से जो क़दम उठाया जाए, उसमें उसका साथ दें।

इसी तरह हदीस में आया है कि पैग़ंबरे-इस्लाम ने ऐलान किया कि इमाम एक प्रकार से प्रशासनिक ढाल है, युद्ध उसके नेतृत्व में किया जाता है और इसके ज़रिये सुरक्षा प्राप्त की जाती है। (सही अल-बुख़ारी, किताबुल जिहाद व अस-सीर)

इससे यह पता चलता है कि जंगी हिफ़ाजत हमेशा सरकार के नेतृत्व में की जाएगी। आम मुसलमानों का दायित्व सिर्फ़ यह होगा कि

वे अपने शासक के आदेशों का पालन करें और उसका साथ देकर सरकार के उद्देश्य को सफल बनाएँ।

यह विषय फ़िक़्ह के विद्वानों के बीच एक आम सहमति का विषय है और शायद जिसमें किसी भी प्रसिद्ध विद्वान का कोई मतभेद नहीं। इसलिए धर्मशास्त्र के इन विद्वानों की आम सहमति और राय के अनुसार जंग का ऐलान सिर्फ़ एक स्थापित सरकार ही कर सकती है, जैसा कि अरबी में कहा जाता है— अल-रहीलू लिल-इमाम यानी जंग का ऐलान करना सिर्फ़ शासक का काम है। सभी ग़ैर-सरकारी यानी जनता सहित आम लोगों के समूहों और व्यक्तिगत सदस्यों को इस तरह के ऐलान करने का अधिकार नहीं।

वास्तविकता यह है कि जंग एक बहुत ही व्यवस्थित और बड़े प्रबंधन वाली प्रक्रिया का नाम है। इस तरह के बड़े प्रबंधन का काम सिर्फ़ एक स्थापित सरकार ही कर सकती है। यही कारण है कि जंगी कार्रवाई सिर्फ़ सरकार के लिए जायज़ है, आम जनता के लिए जंगी कार्रवाई करना बिल्कुल भी जायज़ नहीं।

वर्तमान समय में बहुत से मुल्कों में मुसलमान जिहाद के नाम पर सरकारों की ख़िलाफ़ सशस्त्र और हिंसक टकराव छेड़े हुए हैं, मगर लगभग बिना किसी अपवाद के उनमें से हर एक की हैसियत दंगे और अराजकता की है, न कि इस्लामी जिहाद की। इसका कारण यह है कि उनमें से कोई भी ‘तथाकथित जिहाद’ किसी स्थापित सरकार की ओर से जारी नहीं किया गया है। उनमें से हर एक ‘जिहाद’ ग़ैर-सरकारी संगठनों की ओर से शुरू किया गया है और उन्हीं की तरफ़ से उनको चलाया जा रहा है। अगर उनमें से किसी जेहादी गतिविधि को किसी

मुस्लिम सरकार का सहयोग और सहायता प्राप्त है और यह सहायता बिना ऐलान के केवल गोपनीय तरीक़े से की जा रही है तो इस्लामी क़ानून के अनुसार, किसी सरकार को भी जिहाद का अधिकार केवल उस समय है, जबकि वह स्पष्ट रूप से उसका ऐलान करे। ऐलान के बिना किसी मुस्लिम शासन के लिए भी जंग करना उचित नहीं।

इस समय दुनिया के कई क्षेत्रों में मुसलमानों की ओर से जिहाद के नाम पर जो गतिविधियाँ जारी हैं, आजकल की भाषा में वह दो प्रकार की हैं— या तो उसकी हैसियत छापामार अथवा गोरिल्ला युद्ध की है और या फिर अप्रत्यक्ष युद्ध अथवा छद्म युद्ध (Proxy War) की। यह दोनों ही प्रकार की जंगें स्पष्ट रूप से इस्लाम में अवैध हैं। गोरिल्ला युद्ध इसलिए अवैध है, क्योंकि वह ग़ैर-सरकारी संगठनों की तरफ़ से चलाया जाता है, न कि किसी स्थापित सरकार की ओर से। जबकि अप्रत्यक्ष युद्ध या छद्म युद्ध इसलिए अवैध है कि कोई सरकार इसे बिना ऐलान के जारी करवाती है और ऐलान के बिना जंग इस्लाम में उचित नहीं।

जिहाद की तीन क़िस्में

इस्लामी जिहाद लगातार की जाने वाली एक रचनात्मक प्रक्रिया है। वह मोमिन के पूरे जीवन में लगातार जारी रहती है। इस प्रक्रिया के तीन बड़े पहलू हैं—

(1) **जिहाद-ए-नफ़्स** : अपनी नकारात्मक भावनाओं और अपने अंदर की ग़लत इच्छाओं पर नियंत्रण करना और हर हाल में ईश्वर के पसंदीदा रास्ते पर चलते रहना।

(2) **जिहाद-ए-दावत** : ईश्वर के पैग़ाम को सभी बंदों (लोगों)

तक पहुँचाना और इसके लिए एकतरफ़ा हमदर्दी और भलाई की चाहत के साथ भरपूर कोशिश करना। यह एक महान कार्य है, इसलिए इसे क़ुरआन में जिहाद-ए-कबीर यानी 'महान जिहाद' कहा गया है। (क़ुरआन, सूरह अल-फ़ुरक़ान, 25:52)

(3) **दुश्मनों के ख़िलाफ़ जिहाद** : *दीन-ए-हक़* के विरोधियों का सामना करना और दीन को हर हाल में सुरक्षित और स्थापित रखना ही इस जिहाद का वास्तविक अर्थ है। यह जिहाद पहले भी वास्तव में एक शांतिपूर्ण प्रक्रिया थी और अब भी यह मूल रूप से एक शांतिपूर्ण प्रक्रिया है। इस दृष्टि से जिहाद एक शांतिपूर्ण संघर्ष है, न कि वास्तव में कोई सशस्त्र कार्रवाई।

एक *रिवायत* के अनुसार, हज़रत मुहम्मद ने माँ-बाप की सेवा के बारे में कहा कि तुम अपने माँ-बाप के लिए जिहाद करो। इससे मालूम हुआ कि माँ-बाप की सेवा करना जिहाद का एक अमल है।

इस तरह क़ुरआन की कई आयतें और हदीसें हैं, जिनसे पता चलता है कि जिहाद की प्रक्रिया मूल रूप में एक शांतिपूर्ण प्रक्रिया है। यह किसी आवश्यक ईश्वरीय कार्य में शांति की सीमाओं के अंदर किया जाने वाला भरपूर प्रयास या संघर्ष है। इस प्रकार जिहाद शब्द का सही अर्थ 'शांतिपूर्ण संघर्ष' है।

शांति की महत्ता

क़ुरआन की सूरह अन-निसा में बताया गया है कि मेल-मिलाप ज़्यादा बेहतर है (सूरह अन-निसा, 4:128)। मेल-मिलाप क्या है? मेल-मिलाप दरअसल शांति के परिणाम का दूसरा नाम है। जहाँ मेल-मिलाप है, वहाँ शांति है और जहाँ मेल-मिलाप नहीं है, वहाँ शांति भी

नहीं है। इस दृष्टि से यह कहना सही होगा कि इस्लाम में शांति को सबसे बेहतर और सबसे बड़ी भलाई का दर्जा प्राप्त है।

आम तौर पर लोग न्याय को बड़ी चीज़ समझते हैं, लेकिन वास्तव में सत्य यह है कि न्याय केवल एक विचार या एक अवधारणा है। वास्तविक प्रश्न यह है कि यह विचार या अवधारणा वास्तविक रूप में किस प्रकार प्राप्त हो। इसका उत्तर केवल एक है और वह है शांति के माध्यम से। शांति का यह लाभ है कि इसके माध्यम से अवसर प्राप्त होते हैं। न्याय किसी को अपने आप नहीं मिलता। न्याय किसी समूह को केवल उस समय मिलता है, जबकि वह अवसर को पहचाने और उसका इस्तेमाल समझदारी से करे।

आज दुनिया भर में बहुत से स्थानों पर जहाँ लोग न्याय के लिए लड़ रहे हैं, उनमें से हर एक अपना इच्छित उचित न्याय पाने में असफल है। इसका कारण केवल एक है और वह है ग़लत कार्यशैली। यह एक सच्चाई है कि इस दुनिया में सबसे अधिक महत्ता कार्यशैली की है। इस दुनिया में कोई भी सही लक्ष्य ग़लत कार्यशैली के माध्यम से प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह सिद्धांत इतना ज़्यादा आम है कि इसमें किसी भी व्यक्ति या किसी भी समूह का कोई अपवाद नहीं।

कोई समूह (जाति) जो न्याय चाहता है, उसको सबसे पहले अपने यहाँ शांति स्थापित करनी चाहिए। शांति की महत्ता इतनी अधिक है कि उसे हर स्थिति में स्थापित करना आवश्यक है, चाहे इसका कोई भी मूल्य चुकाना पड़े। शांति कभी भी द्विपक्षीय आधार पर स्थापित नहीं होती, बल्कि यह हमेशा एकतरफ़ा धैर्य सहनशीलता की बुनियाद पर स्थापित होती है। इसके सिवा शांति को स्थापित करने का कोई और उपाय नहीं है।

प्रकृति की व्यवस्था अवसरों पर आधारित है। प्रकृति की व्यवस्था के तहत हमेशा ऐसा होता है कि अवसर बड़ी संख्या में और भरपूर मात्रा में मौजूद रहते हैं। घृणा और हिंसा का वातावरण इन प्राकृतिक अवसरों के लिए बाधक दीवार की हैसियत रखता है। प्रकृति की ओर से दिए गए बहुत से अवसरों का लाभ उठाने के लिए सबसे पहले घृणा और हिंसा की बाधक दीवारों को हटाए जाने की आवश्यकता है। इन बाधक दीवारों के हटते ही अवसर एक बाढ़ की तरह उमड़ पड़ते हैं, जिसमें कोई भी अपने उद्देश्य को प्राप्त करने का लाभ उठा सकता है। ये अवसर अपनी प्रकृति की दृष्टि से सेक्युलर (दुनियावी) भी होते हैं और धार्मिक भी।

अवसर का दुनियावी इस्तेमाल यह है कि लोग शिक्षा और आर्थिक क्षेत्रों में उपलब्ध संसाधनों के प्रबंधन और उनके उपयोग जैसे रचनात्मक कार्यों में व्यस्त हो जाएँ और प्राप्त अवसरों का उपयोग करके वे हर प्रकार की उन्नति करें। अवसरों का धार्मिक उपयोग यह है कि *अह्ले-ईमान* इन अवसरों को दावते-इलल्लाह यानी ईश्वर की राह या सच्चाई की तरफ़ लोगों को बुलाने के कामों में इस्तेमाल करें। वे इस दावत के मिशन में सक्रिय होकर अपने आपको ईश्वर के विशेष उपहारों के लायक़ बनाएँ।

हिंसात्मक कार्रवाई का सौंदर्यीकरण

हिंसा प्रत्येक अर्थ में एक विनाशकारी कार्रवाई है। संपूर्ण मानव इतिहास इस बात का सबूत है कि हिंसा के माध्यम से कभी भी किसी व्यक्ति या किसी समूह को कोई सकारात्मक और रचनात्मक सफलता प्राप्त नहीं हुई। जब भी किसी व्यक्ति या समूह ने हिंसा का

तरीक़ा अपनाया तो उसके हिस्से में केवल विनाश आया, न कि सही अर्थों में कोई लाभ और उन्नति। इसके बावजूद ऐसा क्यों है कि लोग बार-बार हिंसा का सहारा लेते हैं और हिंसात्मक कार्रवाई करते हैं? इसका कारण हिंसात्मक कार्रवाई का 'शैतानी सौंदर्यीकरण' है।

क़ुरआन में बताया गया है कि "शैतान का ख़ास तरीक़ा यह है कि वह किसी अनुचित कार्य को सुंदर शब्दों में प्रस्तुत करता है, वह लड़ाई-झगड़े और दंगे-फ़साद को 'सुधार' का नाम देता है। (क़ुरआन, सूरह अल-हिज्र, 15:39)

इस तरह शैतान लोगों के मन-मस्तिष्क को प्रभावित करता है। वह लोगों को इस व्यर्थ के विश्वास (False belief) में फँसाता है कि जो कुछ तुम करने जा रहे हो, वह हिंसा नहीं है, बल्कि वह एक पवित्र जिहाद है, वह शहादत का रास्ता है, जो तुम्हें सीधे जन्नत तक पहुँचाने वाला है। इस तरह 'शैतानी सौंदर्यीकरण' का शिकार होकर लोग हिंसात्मक कार्रवाई करने लगते हैं। वे अनुचित कार्य कर रहे होते हैं, लेकिन शैतान उनको बताता है कि यह एक अच्छा काम है।

इस 'शैतानी सौंदर्यीकरण' से बचने का सिर्फ़ एक ही रास्ता है, वह यह कि अपने कर्म को परिणाम के उद्देश्य से जाँचा जाए। जो हिंसक कार्रवाई विनाश के परिणाम तक पहुँच रही हो, जिससे प्राप्त अवसर व्यर्थ होते हों, उसके बारे में यह विश्वास कर लिया जाए कि वह शैतान द्वारा सौंदर्यीकरण का परिणाम है और फिर ईश्वर से माफ़ी माँगते हुए शैतान के रास्ते को छोड़ देना चाहिए।

सच्चाई यह है कि हिंसा अपने आपमें एक अनचाहा (Undesirable) कार्य है। हिंसा कभी भी कोई सुधार पैदा नहीं

करती, वह अधिकाधिक हानि का कारण बनती है। हिंसा एक अमानवीय कार्य है, वह कोई मानवीय कार्य नहीं है। हिंसा हमेशा घृणा और शत्रुता से पैदा होती है। अपने अंदर से घृणा और शत्रुता की सोच को समाप्त कर दीजिए, उसके बाद कभी शैतान आपके ऊपर नियंत्रण नहीं पा सकेगा।

प्रतिक्रिया का इस्लाम में कोई स्थान नहीं

बहुत से लोग युद्ध और हिंसा में व्यस्त हैं, निजी या व्यक्तिगत रूप में भी और सामूहिक रूप में भी। उनसे कहा जाए कि तुम यह विनाशकारी कार्य क्यों कर रहे हो तो वे यह उत्तर देंगे कि यह तो एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। जब किसी व्यक्ति या समूह के ख़िलाफ़ अत्याचार और अन्याय होगा तो उसके अंदर अवश्य ही प्रतिक्रिया पैदा होगी। वह बंदूक़ और बम का प्रयोग करेगा, यहाँ तक कि अंत में वह आत्मघाती बमबारी का तरीक़ा अपनाएगा। अगर हमें हिंसक प्रतिक्रियाओं को समाप्त करना है तो दूसरे पक्ष की ओर से किए जाने वाले अत्याचार और अन्याय को समाप्त करना होगा, अन्यथा हमारी ओर से हिंसक कार्रवाई निरंतर जारी रहेगी। प्रतिक्रिया को समाप्त करना है तो पहले दूसरे पक्ष की कार्रवाइयों को समाप्त कीजिए। इस मामले में एकतरफ़ा उपदेश देने से कोई लाभ नहीं होने वाला है।

प्रतिक्रिया का यह विचार और अवधारणा पूरी तरह से अप्राकृतिक है। ऐसे लोगों की असल ग़लती यह है कि उन्होंने अपने मन-मष्तिस्क में अपनी कार्रवाइयों के ग़लत मानक स्थापित लिए हैं है। कार्रवाइयों के मूल्यांकन के लिए कार्रवाई की सही कसौटी यह है कि इसके बाद सामने आने वाले परिणामों को देखा जाए। सही

कार्रवाई की पहचान यह है कि वह कार्रवाई करने वालों के लिए लाभकारी परिणाम पैदा करे। जो कार्रवाई लाभकारी परिणाम पैदा न करे, उसे निश्चित रूप से छोड़ देना चाहिए।

यह एक सच्चाई है कि कोई कार्रवाई या तो लाभकारी परिणाम पैदा करती है या वह कार्रवाई करने वालों के लिए हानिकारक साबित होती है। इस मामले में तीसरी कोई स्थिति नहीं। सबसे बेहतर कार्रवाई वही है, जो सकारात्मक परिणाम पैदा करे और जो कार्रवाई सकारात्मक परिणाम पैदा करने वाली न हो, वह केवल अपने विनाश में बढ़ोतरी के समान है और अपने विनाश को और बढ़ाना कभी किसी बुद्धिमान व्यक्ति का कार्य नहीं हो सकता।

किसी कार्रवाई के विरुद्ध भावनात्मक प्रतिक्रिया उस कार्रवाई का उत्तर नहीं। कार्रवाई का उचित उत्तर यह है कि पहले वर्तमान हालात का निरीक्षण और विश्लेषण (Analysis) कर लिया जाए, सकारात्मक मानसिकता के साथ परिणाम उत्पन्न करने वाली योजना बनाई जाए, फिर टकराव के बजाय रचनात्मक तरीक़े पर अपनी कार्रवाई आरंभ की जाए। यही सही इस्लामी तरीक़ा है।

छोटा जिहाद और बड़ा जिहाद

एक हदीस के अनुसार, पैग़ंबरे-इस्लाम हज़रत मुहम्मद एक युद्ध अभियान से वापस लौटकर मदीना पहुँचे तो आपने कहा, "हम छोटे जिहाद से बड़े जिहाद की तरफ़ वापस आए हैं।" दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि हम अस्थायी जिहाद से स्थायी जिहाद की तरफ़ वापस आए हैं—

> We have come back from temporary Jihad to permanent Jihad.

ध्यान देने से पता चलता है कि अस्थायी जिहाद से आशय रक्षात्मक जिहाद है, जिसकी आवश्यकता सिर्फ़ कभी-कभी होती है और स्थायी जिहाद से आशय आत्मिक और मानसिक जिहाद (Spiritual Jihad) है, जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में स्थायी और लगातार जारी रहता है।

इस बात की चर्चा एक और हदीस में इस प्रकार की गई है— "जिहाद करो, जिस प्रकार तुम अपने शत्रु से जिहाद करते हो।"

दुश्मन के ख़िलाफ़ जिहाद कभी-कभार होने वाली एक अस्थायी चीज़ है, जिसकी आवश्यकता तब होती है, जब किसी ने मुस्लिम राज्य पर हमला कर दिया हो। यह रक्षात्मक जिहाद है और इसमें केवल कुछ प्रशिक्षित लोग ही भाग लेते हैं, न कि पूरा मुस्लिम समुदाय। इसके विपरीत अपने नफ़्स (स्वयं) या अपने मन के ख़िलाफ़ जिहाद एक व्यक्तिगत क़िस्म की चीज़ है और वह हर मोमिन के जीवन में जारी रहता है।

वास्तविकता यह है कि वर्तमान दुनिया परीक्षा की दुनिया है। इसलिए इस दुनिया में हर कार्रवाई को करने के लिए अपने मन के साथ संघर्ष करना पड़ता है। अपने मन के साथ सफल संघर्ष के बिना कोई व्यक्ति जिहादे-नफ़्स (स्वयं से संघर्ष) के कार्य को सफलतपूर्वक परिणाम तक नहीं पहुँच सकता।

उदाहरण के लिए, यह एक पुण्य का काम है कि आप जब किसी व्यक्ति से मिलें तो *अस्सलाम अलैकुम* कहें। यह शब्द कहना इतनी बड़ी कार्रवाई है कि इसके कहने पर हदीस में जन्नत की शुभ सूचना दी गई है, लेकिन वर्तमान दुनिया में जब व्यक्ति लोगों के साथ रहता है

तो बार-बार उसको दूसरों की ओर से कड़वे अनुभवों का सामना करना पड़ता है। इस कारण हर उस व्यक्ति के हृदय में दूसरों के ख़िलाफ़ शिकायत के भाव उपस्थित रहते हैं। ऐसी स्थिति में सही अर्थों में 'अस्सलाम अलैकुम' केवल वही व्यक्ति कह सकता है, जो इससे पहले अपने हृदय को हर तरह के बुरे और नकारात्मक भावों से साफ़-सुथरा कर ले और साथ में अपने हृदय को लोगों के लिए भलाई की इच्छा से भर दे। अगर ध्यान दें तो यह काम इतना कठिन है कि इसके लिए वही कड़ा प्रयास करना पड़ेगा, जिसे जिहाद नामक शब्द से स्पष्ट किया गया है।

इस प्रकार हदीस की किताब सही मुस्लिम में एक हदीस दर्ज है, जिसके अनुसार अल-हम्दुलिल्लाह का कलमा ('Thanks to God': ईश्वर का शुक्र है) *'मीज़ान'* को भर देता है।

ध्यान दें तो यह भी कोई साधारण बात नहीं है। वास्तविकता यह है कि सच्चे तौर पर अल-हम्दुलिल्लाह कहने के लिए एक बड़ी मानसिक और बौद्धिक कार्रवाई की आवश्यकता है। अल-हम्दुलिल्लाह कहना ईश्वर के द्वारा दिए गए उपहारों के लिए धन्यवाद और आभार व्यक्त करना है। ईश्वर के दिए हुए ये उपहार व्यक्ति को निरंतर अनगिनत रूप में मिलते रहते हैं। ये उपहार हर व्यक्ति को अपने आप मिलते हैं, इसलिए व्यक्ति इनका आदी हो जाता है और आदी होने के कारण जानते हुए भी उनको उपहार के रूप में महसूस नहीं करता।

ऐसी हालत में अल-हम्दुलिल्लाह कहने के लिए व्यक्ति को एक सोच-विचार संबंधी जिहाद करना पड़ता है। उसको यह करना पड़ता

है कि अपनी सोच-विचार की शक्ति को प्रक्रिया में लाकर अपने अवचेतन मन यानी अपने निष्क्रिय मन को अपने चेतन मन या सक्रिय मन की सीमा में लाए। अपनी भावनाओं को एक नई दिशा दे। वह अपनी बौद्धिक और सोच-विचार की शक्ति को जगाने के लिए मुजाहिद बन जाए। उसके बाद ही उसकी ज़बान से ईश्वर के धन्यवाद और उसकी प्रशंसा का वह कलमा निकलता है, जो क़यामत के दिन उसके अच्छे कर्मों के पैमाने को भर देता है।

व्यक्ति के अंदर तरह-तरह की इच्छाएँ और मानसिक अवस्थाएँ होती हैं, जैसे— लालच, श्रेष्ठता की भावना, घृणा और दूसरे को छोटा समझना, अधीरता और असहिष्णुता, क्रोध और प्रतिशोध आदि। व्यक्ति हर समय इस बुरी और नकारात्मक भावना के अधीन रहता है। इसी के साथ वह कुछ चीज़ों को अपनी पसंदीदा चीज़ बना लेता है, जैसे— दौलत, शोहरत, प्रसिद्धि और संतान आदि।

घृणा और प्रेम की भावना व्यक्ति पर हर समय छाई रहती है। वह जो कुछ सोचता है, उसे वह भावनाओं में डूबकर सोचता है। ये भावनाएँ ही उसकी सोच को आकार देती हैं। वह सक्रिय या निष्क्रिय मन की अवस्था में यानी जानते हुए भी या अनजाने में इन्हीं भावनाओं के साँचे में अपने जीवन को ढाल लेता है। ऐसी हालत में निस्संदेह यह एक जिहादी कार्रवाई है कि व्यक्ति ईश्वर को लगातार अपने ध्यान और आकर्षण का केंद्र बनाए। वह ईश्वर के बताए हुए सीधे रास्ते से अपने आपको हटने न दे। यही वह बड़ा कठिन कार्य है, जिसे हदीस में जिहादे-नफ़्स यानी स्वयं या मन के ख़िलाफ़ जिहाद कहा गया है।

सारांश

जिहाद एक अरबी शब्द है, जिसका अर्थ है शांतिपूर्ण संघर्ष करना। इस शांतिपूर्ण संघर्ष का अर्थ वास्तव में दावती संघर्ष है, जैसा कि क़ुरआन की सूरह अल-फ़ुरक़ान में मार्गदर्शन किया गया है— शांतिपूर्ण संघर्ष के माध्यम से लोगों तक क़ुरआन का संदेश पहुँचाना।

दावत यानी एकतरफ़ा हमदर्दी और भलाई की इच्छा के साथ ईश्वर के संदेश को सभी लोगों तक पहुँचाना वास्तव में एक वैचारिक संघर्ष है। यह एक बहुत बड़ा कार्य है। इसकी कई माँगें हैं। दावत के काम को जब उसकी सभी आवश्यक माँगों के साथ आकार देने का प्रयास किया जाए तो वह एक बहुत बड़ा संघर्ष बन जाता है। इसलिए इस दावत के कार्य को जिहाद कहा गया है।

वास्तव में जिहाद का अर्थ यही है, लेकिन कभी-कभी इसके विस्तारित अर्थों की दृष्टि से शब्द 'जिहाद' को युद्ध के अर्थ में भी प्रयोग किया जाता है, जो कि उसका सिर्फ़ एक विस्तृत अर्थ है। जहाँ तक आदेश-निर्देश और नियम-सिद्धांत का संबंध है, जिहाद और युद्ध दोनों के आदेश-निर्देश और नियम-सिद्धांत एक-दूसरे से बिल्कुल अलग हैं। दावती जिहाद का वास्तविक उद्देश्य दूसरे पक्ष की सोच को बदलना होता है, जबकि युद्ध का उद्देश्य इसके विपरीत दूसरे पक्ष का विनाश और उसे समाप्त करना है।

जिहाद और क़िताल (युद्ध) के बीच एक आधारभूत अंतर यह है कि जिहाद दावत के अर्थ में सभी लोगों से संबंधित एक सामान्य आदेश है। जिहाद, दावत के संदर्भ में हमेशा और हर स्थिति में करना है। इस प्रकार के जिहाद का उद्देश्य ईश्वर के संदेश को लोगों तक पहुँचाना है। दावत सिर्फ़ मानवीय भलाई पर आधारित एक

रचनात्मक कार्य है, जो हर युग में और हर पीढ़ी में जारी रहता है। इसके विपरीत जिहाद क़िताल (युद्ध) के अर्थ में एक अस्थायी कार्रवाई है, जो केवल उस समय की जाती है, जब किसी दूसरे देश की सेना एक मुस्लिम देश पर आक्रमण कर दे। इस आक्रमण का सामना करने की ज़िम्मेदारी लोगों पर नहीं है, बल्कि इसकी ज़िम्मेदारी केवल एक स्थापित सरकार पर है, जो इस उद्देश्य के लिए इसका प्रबंध करती है। अधिकांशतः इस्लामी कार्रवाइयाँ परिस्थितियों द्वारा संचालित होती हैं। इसी प्रकार युद्ध के अर्थ में जिहाद भी कुछ शर्तों के अधीन है।

वर्तमान समय में बहुत से देशों के मुसलमान इस्लामी जिहाद के नाम से सशस्त्र और हिंसक आंदोलन चला रहे हैं, जो इन शर्तों को पूरा नहीं करते, लेकिन कोई आंदोलन केवल इस कारण जेहादी आंदोलन नहीं हो सकता कि उस आंदोलन को चलाने वालों ने उसे जिहाद का नाम दे दिया हो। जिहाद के बारे में कुछ मुसलमानों की कार्रवाइयों के आधार पर एक राय बनाने के बजाय इस मामले में इस्लामी शिक्षाओं पर ध्यान देना अधिक महत्वपूर्ण है। मुसलमानों को इस्लामी शिक्षाओं की रोशनी में आँका जाना चाहिए, न कि इसके विपरीत।

पारिभाषिक शब्दावली

इबादत (बहुवचन इबादात)— एक ईश्वर के समक्ष पूर्ण रूप से, विनम्रतापूर्वक, प्रेम, श्रद्धा और भक्ति-भाव के साथ झुक जाना और उसकी मर्जी के आगे समर्पित हो जाना। ज़िंदगी का कोई भी काम अगर ईश्वर के हुक़्म के मुताबिक किया जाए और उसकी मर्जी को माना जाए तो वह इबादत है।

मुजाहिद— ईश्वर की राह में संघर्ष करने वाला

पैग़ंबर— ईशदूत, ईश्वर का संदेश लोगों तक पहुँचाने वाला व्यक्ति

हु*दैबिया शांति-समझौता*— यह शांति-समझौता पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद और मक्का के क़ुरैश के बीच 628 ईस्वी में किया गया था। पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद अपने 1,400 साथियों के साथ उमरह के इरादे से मदीना से मक्का के लिए रवाना हुए। क़ुरैश को इस बात की ख़बर मिली कि मुसलमान हज के इरादे से आ रहे हैं और लड़ाई नहीं करना चाहते, लेकिन फिर भी उन्होंने यह फ़ैसला कर लिया कि हर स्थिति में मुसलमानों को मक्का में प्रवेश करने से रोकना है। जब पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद अपने साथियों के साथ मक्का से 10 मील पहले हुदैबिया नामक स्थान पर पहुँचे तो क़ुरैश के सरदारों ने उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया। इस गतिरोध को हल करने के लिए पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद ने क़ुरैश के साथ शांतिपूर्ण वार्ता का फ़ैसला किया और शांति स्थापित करने के लिए क़ुरैश के द्वारा रखी गई एकतरफ़ा शर्तों को मान लिया। यह 10 साल की जंगबंदी और शांति का समझौता था, जिसे 'हुदैबिया शांति-समझौता' के रूप में जाना जाता है,

मगर क़ुरैश ने हुदैबिया शांति-समझौते को तोड़ दिया। इस शांति-समझौते के 2 साल बाद जब पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद अपने साथियों के साथ शांतिपूर्ण अभियान पर मदीना से मक्का की तरफ़ यात्रा कर रहे थे, तब इस मौक़े पर एक मुसलमान की ज़बान से ये शब्द निकले, "आज का दिन लड़ाई का दिन है।" यह सुनकर पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद ने कहा, "नहीं, आज का दिन रहमत और दया का दिन है।"

रसूल– ईशदूत

क़िताल– जंग, युद्ध

हदीस– हज़रत मुहम्मद के द्वारा कही गई बातें, बात, वाणी, ख़बर

नफ़्स– चित्त, मन

मोमिन– सच्चे हृदय से केवल एक ईश्वर की आराधना करने वाला, ईश्वरभक्त

दावत व तबलीग़– हमदर्दी और भलाई की इच्छा से ईश्वर की राह या सच्चाई की तरफ़ बुलाने का काम, आवाहन एवं प्रचार-कार्य

सुन्नत– हज़रत मुहम्मद की सोच व उनके काम करने का तरीक़ा या कार्यशैली

शिर्क– अनेकेश्वरवादी होना, एक ईश्वर के साथ किसी और को सम्मिलित करना, अंधविश्वास

तौहीद– एकेश्वरवाद, केवल एक ईश्वर के प्रति समर्पण या विश्वास

क़ुरैश–क़ुरैश एक शक्तिशाली व्यापारी अरब क़बीला था, जिसका इस्लाम के आने से पहले मक्का और उसके काबा पर नियंत्रण था। पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद भी इसी क़बीले की बनू हाशिम शाखा के सदस्य थे।

हिजरत– प्रवास करना, एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान की ओर जाना

उमरह– वार्षिक हज की तारीख़ों को छोड़कर साल में कभी भी किया जाने वाला हज

मंसूख़– रद्द, निरस्त

फ़िक़्ही– मुस्लिम धर्मशास्त्र संबंधी

शरीयत– इस्लामी क़ानून

दीन-ए-हक़– सच्चा धर्म

रिवायत (*रिवायत/रिवायात/रवायात*)– किसी के मुँह से सुनी हुई बात ज्यों की त्यों किसी से कहना। इस्लामी परिभाषा में रिवायत का मतलब है पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद के मुँह से सुनी हुई बात को दूसरों को उन्हीं के शब्दों में सुनाना या हदीस बयान करना।

अह्ले-ईमान– केवल एक ईश्वर में विश्वास करने वाले, केवल एक ईश्वर की आराधना करने वाले

अस्सलाम-अलैकुम– तुम पर सलामती (शांति) हो

मीज़ान– शेष (Balance)

क़ुरआन में भी जिहाद या इसके मूल धातु से उत्पन्न शब्द उसी अर्थ में आए हैं, जिस अर्थ में वह अरबी डिक्शनरी में इस्तेमाल होते हैं यानी किसी उद्देश्य के लिए भरपूर और अधिकतम प्रयास करना। 'जिहाद' शब्द का क़ुरआन में चार बार प्रयोग हुआ है और हर स्थान पर यह शब्द प्रयास और संघर्ष के अर्थ में है, न कि सीधे तौर पर लड़ाई और जंग के अर्थ में।

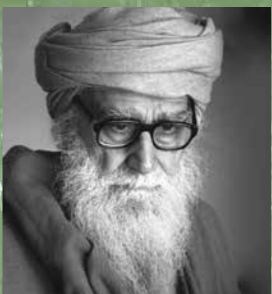

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान 'सेंटर फॉर पीस एंड स्प्रिचुएलिटी', नई दिल्ली के संस्थापक हैं। मौलाना का मानना है कि शांति और आध्यात्मिकता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं : आध्यात्मिकता शांति की आंतरिक संतुष्टि है और शांति आध्यात्मिकता की बाहरी अभिव्यक्ति। विश्व-शांति में अपने महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान प्राप्त है।

CPS International
centre for peace & spirituality
www.cpsglobal.org

Goodword
www.goodwordbooks.com